स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग दिनांक - 30-4-2020
द्वितीय सेमेस्टर

हम, अलि, गोकुलनाथ अराध्यो।
मन बच क्रम हरि सों धरि पतिव्रत प्रेमजोग-तप साध्यो॥
मातु-पिता हित-प्रीति, निगम-पथ तजि दुख-सुख भ्रम नाख्यो॥
मान अपमान परम परितोषी अस्थिर थिति मन राख्यो॥
सकुचासन, कुलसील परस करि जगत बंद्य करि बंदन॥
मान अपवाद पवन-अवरोधन हित-क्रम काम-निकंदन॥
गुरुजन-कानि अगिनि चहुँ दिसि, नभ-तरनि-ताप बिनु देखे॥
पिवत धूम-उपहास जहाँ तहँ, अपजस स्रवन-अलेखे॥
सहज समाधि बिसारि वपु करी, निरखि निमेष न लागत।
परम ज्योति प्रति अंग माधुरी धरत यहै निसि जागत॥
त्रिकुटी संग भ्रूभंग, तराटक नैन नैन लगि लागे।
हँसत प्रकाश, सुमुख कुंडल मिलि चंद्र सूर अनुरागे॥
मुरली अधर स्रवन धुनि सों सुनि अनहद शब्द प्रमाने।
बरसत रस रुचि-बचन-संग, सुख-पद-आनंद-समाने॥
मंत्र दियो मनजात भजन लगि, ज्ञान ध्यान हरि ही को।
सूर, कहौ गुरु कौन करै, अलि, कौन सुनै मत फीको॥78॥

व्याख्या :- विद्यार्थियों अब तक आप समझ गये होंगे कि इन पदों के माध्यम से सूरदास जी गोपियों के द्वारा सगुण का समर्थन करवा रहे हैं। उद्धव के निर्गुणोपासना के संदेश का खण्डन करती हुई अपनी बात कहती हैं यहाँ वो खुलकर कहती है कि हम लोगों ने मन, कर्म और वचन से कृष्ण की आराधना का व्रत ले लिया है और हमें किसी भी प्रकार उधर से फिराया नहीं जा सकता है। वो कहती हैं कि हम लोगों ने प्रेमयोग का निश्चय कर लिया है उन

हमलोगों को ज्ञान योग किसी भी प्रकार प्रभावित नहीं कर सकता है। हमलोगों ने उन्हें अपना पति मान लिया है और सर्वात्मना पातिव्रत्य धर्म का पालन करेंगी। हमलोग माता पिता, सगे-सम्बन्धी नियम-कानून सुख-दुख किसी के द्वारा रोकी नहीं जा सकती हूं। मान और अपमान कुछ भी हमें इस रास्ते पर चलने से रोक नहीं सकता है। हमें इसी से परम संतुष्टि प्राप्त हो गयी है। उनका कहना है कि आज न मुझमें संकोच होता है, ना ही कुलशील की बाधा हमें रोक सकती है। यहाँ तक कि संसार की कोई भी बंधन हमें बाँध नहीं सकता है। मेरे अंदर ज्ञान कोई दूसरी कामना भी नहीं रह गयी है। गोपियाँ तो श्रीकृष्ण के प्रेम में इतना

डूब गयी हैं कि उन्हें गुरुजनों और उनके बनाये गये नियमों से भी कोई डर नहीं लगता है। उनके प्रेम में प्रकृति भी बाधा उत्पन्न नहीं कर सकती है। गोपियों पर तो गुरुजनों के नियम की पंचायत का भी कोई असर नहीं होता है।

योगियों के प्रेम साधना के समान ही इन्होंने भी अपने को तपा चुकी हैं। जैसे योगी जन कुण्डलिनी को जाग्रत कर संसार से असंगामी हो जाते हैं उसी प्रकार प्रेम योगिनी गोपियाँ भी हो गयी हैं। न उन्हें भूख प्यास की चिन्ता है, न ही किसी और वस्तु की आवश्यकता है। वो तो कृष्ण के ध्यान में बिना पलक गिराए एकटक देखती रहती हैं। वो साधना में इतनी रत हो गयी हैं कि दोनों नेत्रों के मध्य त्रिकुटी पर अपनी चेतना को पहुँचा कर परमानंद की प्राप्ति कर रही हैं। वह निर्निमेष बस उस छवि को निहारती रहती हैं। वह उस परम ज्योति को देखती हुई दिन रात जागती रहती हैं जैसे योगी इड़ा-पिंगला के मध्य सूर्य और चन्द्रमा के प्रकाश का अनुभव करते रहते हैं वैसे ही उन गोपियों के लिए कृष्ण ही हंसी चन्द्रमा है और कुण्डल सूर्य हैं जिसके प्रकाश को देखती हुई अन्यत्र नहीं देखती हैं। श्री कृष्ण की मुरली की धुन उनके लिए अनहद के नाद है जो वह दिन रात सुनती रहती हैं। श्री कृष्ण की मधुर वाणी के साथ ही

आनन्द की वृष्टि उसी प्रकार होती है जैसे किसी साधक
को अनाहद नाद से आनन्द की वृष्टि होती
नजर आती हैं। जैसे को भी गुरुमंत्र लेते है
उसी तरह हमारे गुरु कामदेव ने हमे भजन
का मंत्र देकर अपनी शिष्या बनाया है।
आज तो वो श्रीकृष्ण के ध्यान और ध्यान मे
लगी रहती हैं। उनका कहना है कि एकबार तो
हमने गुरुमंत्र ले लिया है तो अब योग का
गुरुमंत्र कैसे लें।

विद्यार्थियों आपको [illegible] की वर्ग मे पढ़ाने
का मौका कम मिला नहीं तो कविता पढ़ाते समय उसमें
उस वक्त अलंकारों की चर्चा भी होती रहती। यहाँ
मैं बता दूँ कि सम्पूर्ण पद मे सांग रूपक अलंकार
का प्रयोग किया गया है। इसका तात्पर्य यह कि सभी
अंगों के साथ एक वस्तु की तुलना दूसरी वस्तु से की
जाती है। इस सांग रूपक को समझने के लिए रूपक को
समझना जरूरी है। उपमेय में उपमान के निषेध रहित आरोप
को रूपक कहते है। इसके दो भेद होते हैं एक निरंग रूपक
और दूसरा सांग रूपक। उदाहरण के तौर पर बता दें कि
"चन्द्रमुखी" में निरंग रूपक हैं क्योंकि मुख की मात्र
यहाँ चन्द्रमा से की गयी है। जबकि "अम्बर पनघट में डुबो
रही तारा घट उषा नागरी"। आकाश रूपी पनघट मे तारा
रूपी घड़े को उषा रूपी चतुरा डुबो रही है। इसमें एक
नहीं सभी अंगों की तुलना [illegible] की गयी है।

अब मैं समझता हूँ कि यहाँ [illegible] रूपक के सौन्दर्य इस पद में ज्ञान योग के खण्डन के लिए प्रेम योग की प्रतिष्ठा की गयी है। ज्ञान योग की जितनी क्रियायें हैं उतनी क्रियाओं की चर्चा इसमें की गयी है और बताया गया है कि वह सब प्रेमयोग में भी सम्भव है। चित्तवृत्तिनिरोध से लेकर ध्यानयोग तक की क्रियाओं और उसके बाद की अवस्था की भी तुलना इसमें की गयी है। इस प्रकार हम देखते हैं कि महाकवि सूरदास ने इस पद के माध्यम से अपनी प्रतिभा का परिष्कृत रूप प्रस्तुत किया है।

कुमार रजनीकान्त रंजन

30-9-202